प्रश्नावली-जैनत्व क्या है - लेखक उदय मुनि

उत्तरदाताओं के लिए नियम एवं पुरस्कार :

1. जैनधर्म के मूलभूत तत्त्व या सिद्धान्त समझने का लक्ष्य रखें। पुरस्कार गौण हैं। समझ भी ऐसी कि जन्म-मरण से मुक्त हो जाएं।
2. इस लघुग्रन्थ का स्वाध्याय ज्ञानावरणीय कर्म की निर्जरा है।
3. मूल्यांकन ग्रन्थ के आधार पर, तीन निष्पक्ष व्यक्ति करेंगे। चुनौती योग्य नहीं।
4. उत्तीर्णांक : प्रथम श्रेणी 90%, द्वितीय श्रेणी 60%, तृतीय श्रेणी 40% इन सभी को पुरस्कार।
5. श्रेणी अनुसार पुरस्कार राशि होगी। प्रथम श्रेणी में प्रथम तीन को विशेष पुरस्कार।
6. पुरस्कार राशि दानदाता की भावनानुसार होगी। दानदाता : श्रीमति स्नेह जैन, श्री सुशील जैन, सी.ए., एफ 109, अशोक विहार, फेस-1, दिल्ली, मो. 93110-81107
7. आधार ग्रंथ और प्रश्नावली, प्रवचन-श्रोता-समूह को वाट्स एप से भेजेंगे।
8. जिन्हें छपा हुआ ग्रंथ और प्रश्नावली चाहिए वे निर्धारित केन्द्रों से ले सकते हैं।
9. आयु सीमा नहीं रखी है।
10. उत्तरदाता : नाम, पिता या पति का नाम, आयु, फोन, बैंक खाता क्रमांक, पता लिखें।
11. ग्रन्थ और प्रश्नावली www.deshana.co.in पर उपलब्ध है। परिणाम इस पर और फोन क्रमांक 9899104445 (अंशुल जैन) पर भी मिलेंगे।
12. ग्रन्थ और प्रश्नावली लेने हेतु केन्द्र 1 2 3 4 5 (पीछे के पृष्ठ पर लिखें हैं)
13. ग्रन्थ और प्रश्नावली (निशुल्क) मंगाने हेतु : श्री भारत जारोली, जारोली भवन, नीमच फोन : 925923214, 9301038314
14. प्रश्न क्रमांक 99 से 108 तक के उत्तर क्रमशः अपने पन्नें पर लिखें। उत्तर भेजने की अन्तिम तिथि 27.10.2019 परिणाम घोषणा तिथि 11.11.2019
15. **उत्तर** : अंशुल जैन को फोन क्रमांक 9899104445 पर वाट्स एप कर दें या डाक / कूरियर से, महामंत्री श्री एस. एस. जैन सभा, महावीर भवन, सेक्टर-15, फरीदाबाद भेजें। पुरस्कार राशि सीधे आपके बैंक खाते में जमा हो जाएगी।

संपर्क फोन :

1. अंशुल जैन	2. श्री सत्यनारायण जैन, महामंत्री	3. श्री भारत जारोली
मो. 9899104445	मो. 9810123517	मो. 93101038314

ग्रन्थ और प्रश्नावली प्राप्ति स्थान -

1. जैन स्थानक, कोल्हापुर रोड़, कमला नगर, सब्जी मंडी, दिल्ली
2. जैन स्थानक, ऋषभ विहार, कड़कड़डुमा के पास, दिल्ली
3. जैन स्थानक, अरिहंत नगर, दिल्ली
4. जैन स्थानक, चांदनी चौक, महावीर भवन, दिल्ली या श्री दिनेश जैन, धूलिया कटरा, चांदनी चौक, दिल्ली
5. जैन स्थानक, अशोक विहार, फेस-I, दिल्ली
6. जैन स्थानक, मॉडल टाउन, फेस-II, दिल्ली
7. जैन स्थानक, वल्लभ विहार, रोहिणी सेक्टर 13, दिल्ली
8. जैन स्थानक, लाल भवन, चोड़ा रास्ता, जयपुर
9. जैन स्थानक, महावीर भवन, आर्दश नगर, जयपुर
10. जैन स्थानक, सिंगोली, जिला नीमच (म.प्र.)
11. श्री जीवन सिंह जारोली, जारोली भवन, नीमच रोड, बड़ी सादड़ी, जिला चित्तौड़ (राज.)
12. जैन स्थानक, जैन बाजार, शहर जम्मू
13. जैन स्थानक, हिरणमगरी, सेक्टर 4, उदयपुर या श्री पुखराज जैन धींग, म. नं. 246, सेक्टर 3, हिरणमगरी, उदयपुर 313001, मो. 9414473852
14. जैन स्थानक बिजयनगर, जिला अजमेर (राज.) या श्री शान्तिलाल बाबेल, मंडी चौराहा, बिजयनगर, मो. 9413040160
15. श्री उमरावसिंह चौधरी, वकील कॉलोनी, काशीपुरी, भीलवाड़ा (राज.), मो. 9414974610, 9460580116

प्रश्नावली

मुख्य आधार ग्रन्थ है - जैनत्व क्या है - लेखक उदय मुनि

नाम : ..... आयु .....वर्ष, पिता/पति का नाम .....

फोन : ..... बैंक .....

डाक का पूरा पता : .....

.....

क्रम सं.	विषय
1	क्रिया है तो कर्म है, अक्रिय है तो मुक्ति है। (1) हाँ (2) नहीं
2	महावीर (1) कर्मवादी हैं या (2) अकर्मवादी
3	गौर वर्ण से श्याम वर्ण, काले से सफेद बाल, रोग-महारोग, जीर्णावस्था आने लगी, दुखी-आर्त्त होने लगे। क्या सम्यक्त्वी मानें ? (1) हाँ (2) नहीं जो भी उत्तर हो, एक वाक्य में कारण लिखें। ....
4	बिना काना-मात्रा के, दो-दो अक्षरों वाले, तीन पराये किन्हें कहा ? 1. ..... 2. ..... 3. .....
5	द्रव्य से : मैं जीव हूँ। द्रव्य से : यह शरीर ..... है क्षेत्र से : मैं ..... प्रदेशी हूँ। क्षेत्र से यह शरीर ..... प्रदेशी है। काल से मैं ..... हूँ। काल से : शरीर .....है। भाव से : मैं अनन्त ..... पर्ययवान हूँ। भाव से यह शरीर 1. अनन्त ..... अनन्त ..... पर्ययवान हूँ। 2. अनन्त.....3 अनन्त .....4. अनन्त ..... पर्ययवान हूँ। अनन्त ..... वाला है। गुण से : मैं ..... वाला हूँ। गुण से : यह शरीर ..... वाला है।
6	अनन्तकाल से जीव के राग-द्वेष-मोह, क्रोध-मान-माया-लाभ, इन्द्रिय विषयों में रति-अरति हो रही है, यह मेरा स्वभाव है। (1) हाँ (2) नहीं
7	गृहस्थ है, बच्चा नीरोगी रहे, जीवित रहे, अतः कुल देवता या सतीमाता के यहाँ जाकर 'जडूलिए' उतरवाता है, 'सवामनी' करता है। गृहस्थ है अतः ऐसा करने से उसे मिथ्यात्वी नहीं कहा जा सकता है। (1) हाँ, नहीं कहा जा सकता है। (2) मिथ्यात्वी ही है।
8	तादात्म्य संबंध किससे है ? ....

9	(क) एक व्यक्ति ने 'उवसग्गहर' की सवा करोड़ माला फेरी । क्या उसके सब संकट, दुखादि मिट जाएंगे। क्या सत्य है ? (1) हाँ (2) नहीं (ख) जो भी उत्तर हो, एक वाक्य में कारण दें। .....
10	पुद्गल शरीर का अपने स्वभाव के अनुसार .... में अपने में (आत्मा में) होना मानने से .... का ..... होता है।
11	क्या यह सत्य है कि आभ्यांतर तप करते हुए, बाह्य तप सहज ही हो जाते हैं ? (1) हाँ (2) नहीं
12	मैं वर्तमान में भी अनन्त ज्ञान गुण सम्पन्न, वर्तमान में केवलज्ञान गुणसम्पन्न हूँ, यह मानना घोर मिथ्यात्व है। (1) हाँ (2) नहीं
13	होना या न होना, होनहार या नियति कौन तय करता है ? (1) परमात्मा (2) प्रकृति (3) जीव स्वयं (4) कर्म (5) नियति-एक तीसरी शक्ति
14	मुक्त होने, मोक्ष के लिए किस संयोग को छोड़ें ? .....
15	दो प्रकार की त्रिपदी कही है : (1) द्रव्य 2. ..... 3 ..... (1) उत्पाद 2. ..... और 3. .....
16	ज्ञान गुण की विभाव पर्याय है ..... को अपना जानना, अपने को न जानना।
17	उदीरणा का स्वरूप समझाएँ । (दो वाक्य) .....
18	क्या प्रतिपल, तीनों संयोगों का संयोग है, प्रतिपल वियोग है ? (1) हाँ (2) नहीं
19	संयागों का क्रम आया - शरीरादि, रागादि, ज्ञानावरणादि। क्या यही सत्य है ? (1) हाँ (2) नहीं
20	पुण्य से मिली अनुकूलताओं और पाप से मिली प्रतिकूलताओं से क्या आत्मार्थ-मोक्षार्थ साधने में संबंध है ? (1) हाँ (2) नहीं
21	कौनसा वाक्य सही है ? (1) पूर्व का नाश और नवीन का जन्म होता है। (2) पूर्व पर्याय का व्यय होता है, उसी समय नवीन पर्याय का उत्पाद होता है।
22	प्रश्न 32 का विलोम करें ....., ... से ..... हो जाना।
23	सुना है - जैन श्रेष्ठी भी कर-चोरी तो करते हैं। फि उसे पुण्य में भी कुछ लगाते हैं वह कौन सा कषाय है ? ..... या ..... या दोनों।

24	आत्मा शरीर में रहता है। क्या यह सत्य है ? (1) हाँ (2) नहीं
25	द्रव्य भी प्रतिपल विद्यमान है, उसके गुण में परिवर्तन भी प्रतिपल है। उसे आगमिक शब्द दें : .....
26	एक व्यापारी है अत: महालक्ष्मी की, एक शिक्षक या विद्यार्थी है तो सरस्वती की पूजा करता है, ऐसे कई जैन हैं, वैष्णोदेवी दर्शन के लिए तो कई जैन भी जाते हैं, इन्हें मिथ्यात्व नहीं कहा जा सकता है। (1) हाँ (2) नहीं
27	(क) एक दयालु गोरक्षक ने, मरणासन्न, तड़फती हुई गाय को 'अ सि आ उ सा'' या नवकार महामंत्र इक्कीस बार सुनाया। क्या उसे सम्यक्त्व हो गई मानें, क्या देवगति हो गई, अगले मनुष्य भव में उसका मोक्ष हो जाएगा ? (1) हाँ (2) नहीं (ख) जो भी उत्तर हो एक वाक्य में कारण लिखें। ....
28	पाप की अपेक्षा से .... है परन्तु संवर-निर्जरा की अपेक्षा से .... और हेय है।
29	सम्यक् ज्ञान, सम्यक्त्व के बिना, ज्ञानी ने बाह्य त्याग, बाह्य तप, व्रत, महाव्रत का निषेध क्यों नहीं किया ? (एक वाक्य) .....
30	''जड़ (पुद्गल) चेतन नहीं हो सकता, चेतन जड़ नहीं हो सकता,'' यह तो वैज्ञानिकों ने सिद्ध किया कि झूठ है। उन्होंने एक मादा भेड़ के शरीर की कोशिका ली और माँ के समान, हूबहू भेड़ी (नए चेतन) की रचना कर दी। आप क्या मानते हैं ? (1) सिद्धान्त झूठा है (2) सिद्धान्त परम सत्य है।
31	शरीर की साज-सज्जा करवाने वाले जैन भी क्या भारी कर्म बांध रहे हैं, यह कहना सत्य है क्या ? (1) हाँ (2) नहीं
32	कर्म बंध का मूल है, अज्ञान। अ-ज्ञान अर्थात् ..... को जाना नहीं .... पराए को अपना जाना फिर उसकी पूर्ति में ..... के प्रति .... और बाधक के प्रति ..... उसका दुष्फल है .... और अनन्त .....
33	गमन करने में सहायक द्रव्य है : (1) पृथ्वी (2) हवा (3) वाहन (4) धर्म (5) ईथर
34	घड़े का बनाने वाला कुम्भकार होता है, घर-गृहस्थी को चलाने वाला मुखिया होता है तो इस सृष्टि (लोक) को चलाने वाला भी कोई होना ही चाहिए। (1) हाँ, है (2) नहीं है
35	प्रत्येक आत्मा में परमात्वस्वरूप प्रकट करने की शक्ति/सत्ता है, ऐसा मानने वाले एकमात्र ..... हैं अन्य कोई दार्शनिक या धर्मवेत्ता नहीं है।

36	ईर्ष्या या द्वेषवश कोई नंगी-नंगी गालियाँ दे रहा है, क्रोध आना तो स्वाभाविक है ? (1) हाँ (2) नहीं
37	क्या पुण्योदय से सम्यक्त्व और सर्व विरति संयम आता है ? (1) हाँ (2) नहीं
38	लोकसभा चुनाव परिणाम घोषणा के दिन अनेक जैनियों ने भी परिणाम जानने हेतु टी. वी. पर आंखें-कान लगाए रखे। क्या उन्होंने भयंकर कर्मबंध कर लिया ? (1) हाँ (2) देशप्रेमी होने से, नहीं
39	श्रद्धा गुण का विपरीत परिणमन है ....
40	चौबीस तीर्थंकरों को नमस्कार से सम्यक्त्व-विशुद्धि होती है, फिर नमस्कार को पुण्य क्यों कहा ? (एक वाक्य) .....
41	राग और ..... और .....का और द्वेष में ..... और ..... का समावेश हो जाता है।
42	बार-बार पलक झपकना किससे ? (1) आंख से (2) धर्म द्रव्य से (3) अधर्म द्रव्य से (4) धर्म द्रव्य और अधर्म द्रव्य से
43	चौदहपूर्वों का सार : (1) केवलज्ञान (2) महामंत्र नवकार (3) मतिश्रुतज्ञान
44	जो श्वोच्छवास ले वह ..... है, जिसका तीनों काल अस्तित्व है, वह ..... है, जो जीता है ..... है, जो शुभ या अशुभ भाव-कर्म करने में समर्थ है, वह ..... है।
45	परिवार में स्नेह-वात्सल्य, प्रेम, आदर सम्मान सेवा सर्वत्र प्रशंसनीय हैं। क्या सद्गुरु या परम सद्गुरु की दृष्टि में भी प्रंशसनीय है ? (1) हाँ (2) नहीं जो भी उत्तर हो, एक वाक्य में कारण दें। ....
46	किसको दान देने से पुण्य होता है ? (एक शब्द) .....
47	सम्यक्त्वी की अन्तिम ..... से भी भय नहीं होता है परन्तु ..... बढ़ने का भय होता है। वह ..... होता है।
48	मैं आत्मा हूँ, शरीरादि, रागादि ज्ञानावरणादि रूप नहीं हूँ, ऐसी निरन्तर रटन रहती है। गृहस्थ है तो राग-द्वेषादि भी होते हैं। तब क्या वह सम्यक्त्वी है ? (1) हाँ (2) नहीं
49	अध्यात्म में पति-पत्नी के मैथुन सेवन को भी पाप कहा है, इसे मानने का अर्थ होगा - मोक्ष जाने वाला मनुष्य ही पैदा नहीं होगा, संसार ही नहीं चलेगा। इसलिए प्रथम चक्रवर्ती भरत ने अनाचार मिटाने हेतु एक सम्यक् विवाह पद्धति डाली। आप किसके पक्ष में हैं ? (1) परम आध्यात्मवादी तीर्थंकर ऋषभदेव (2) प्रथम चक्रवर्ती भरत

50	वर्तमान में आपको दो अति महत्त्वपूर्ण निमित्त मिले हैं। (1) चिंतामणि .... (2) ..... सुनने का ..... अवसर
51	जीव के ..... भावों की .... के अनुसार .... के पुद्गल आकर्षित होते हैं और ..... आदि में ....आत्मा के साथ ..... और स्पृष्ट होते हैं। जैसे (दृष्टांत दें) ....
52	जीव और पौद्गलिक शरीर में अन्तर लिखें। जीव : शरीर :
53	मन-वचन-काया-इन्द्रियाँ होते हुए भी परम आत्मिक सुख में लीन कौन हैं? (1) आचार्य-उपाध्याय (3) सिद्ध (2) अरिहंत (4) पांचों परमेष्ठी
54	मम्मी मेरा पेट दुख रहा है। इसका अनुभव पेट को होता है या आत्मा को ?
55	न स्वर्ग है, न नरक है, न पूर्व भव है, न पश्चात भव, मात्र यह मनुष्य भव है अत: खाओ-पीओ-एश करो। ऐसा कौन मानता है ? (1) चार्वाकवादी (2) सभी जैन-नई पीढ़ी के (3) संसार के सभी मनुष्य (4) गोशालक
56	चारित्र गुण की स्वभाव पर्याय है : स्वयं के ..... का अनुभव करना . ..... के माध्यम से होने वाले ..... या ..... से परे हो जाना।
57	क्या यह सत्य है कि गृहस्थी बसाना और गृहस्थी चलाना अर्थात् चतुर्गतिरूप संसार बढ़ाना ? (1) हाँ (2)नहीं
58	जैसे राक्षसों, दानवों, दुष्टों का दमन करने राम ने, कृष्ण ने अवतार लिया, वैसे ही अहिंसा के अवतार महावीर ने भी संसार में व्याप्त पाप मिटाने, चन्दनबाला, अर्जुनमाली आदि को तिराने हेतु अवतार लिया। (1) हाँ (2) नहीं
59	किसको दान देने से एकान्त निर्जरा होती है ? (एक शब्द) .....
60	देखा-देखी लंबी तपस्या की, धर्म संघ ने अभिनंदन किया। क्या वह लोभ या मान कषाय का पाप हुआ, कहना सत्य है ? (1) हाँ (2) नहीं
61	'देव मेरे अरिहंत' ऐसी पक्की मान्यतावाला चार धाम की यात्रा, हरिद्वार में या प्रयागराज में, गंगा में डुबकी लगाता-लगवाता है। क्या सम्यक्वी है। (1) हाँ (2) नहीं
62	कर्म का कर्त्ता कौन ? (1) पूर्व कर्म (2) निमित्त, व्यक्ति-वस्तु-स्थिति (3) मन-वचन-काया (इन्द्रियाँ) (4) काल या जमाना या पाँचवां आरा (5) आत्मा का विकारी भाव

63	वासुदेव, चक्रवर्ती, तीर्थंकर होना भी नियति पर निर्भर है, मोक्ष होना भी नियति पर निर्भर है। क्या यह सत्य है ? (1) हाँ (2) नहीं
64	अरिहंत और तीर्थंकर में समानता : (1) ..... (2) असमानता .....
65	क्या अनुभव मेरा गुण है ? (1) हाँ (2) नहीं
66	संवर किसे मानें ? (1) अशुभ योग (2) शुभ और अशुभ योग संवर
67	एक व्यक्ति ने ''मैं आत्मा हूँ, शरीरादि नहीं'' की माला बनाई, सवा करोड़ बार माला जपी वह तो निश्चित ही मोक्ष चला जाएगा। (1) हाँ (2) नहीं उत्तर जो भी हो, एक वाक्य में कारण दें । .....
68	क्रोधादि (रागादि मोहादि) चौबीस प्रकृतियों में होते हैं, आत्मा त्रिकाल निर्विकारी है। ऐसा कौन मानता है ? (1) तीर्थंकर (2) गोशालक (3) सांख्यमती (4) ईश्वरवादी
69	कर्माश्रव मूलतः आत्मा के विकारी भावों से होता है, उसमें निमित्त-कारण की महत्ता नहीं है फिर निमित्त कारणों को भी छोड़ने के लिए ज्ञानी ने क्यों कहा ? (एक पंक्ति) .....
70	इस पृथ्वी पर ही दैवीय सुख भोगनेवाले मनुष्य हैं, नारकीय दुख भोगने वाले मनुष्य हैं, प्रत्यक्ष प्रमाण है, स्वर्ग-नरक का प्रत्यक्ष प्रमाण ही नहीं है। क्या आप ऐसा मानते हैं ? (1) हाँ (2) नहीं
71	वह भूल कितने काल में मिटेगी ? (1) अनेक भव में (2) इस मनुष्य भव में (3) अभी इसी क्षण में कैसे मिटेगी ? उत्तर - ..... प्रज्ञप्त ..... सद्गुरु से ....., अन्तर ..... में ..... जो जाए कि मैं तो मात्र ..... हूँ शेष सभी .... ।
72	देवी-देवता की अर्चना-पूजादि करने से वे, उस भक्त को सुख देते हैं, दुख मिटाते हैं। (1) हाँ (2) नहीं
73	कर्म बंध के पाँच कारण गिनाईए। 1 ..... 2. ..... 3. ..... 4. ..... 5. .....
74	अनेकान्त दर्शन किसे कहा ? (1) सर्वधर्म समभाव (2) परस्पर विरोधी मान्यताओं में सामंजस्य (3) मैं कहता हूँ, वह सत्य है, तुम कहते हो यह भी सत्य है। (4) प्रत्येक द्रव्य अनन्त गुणधर्मात्मक है, एक-एक करके उन्हें प्रकट करना

75	एक व्यक्ति उसे ही निर्ग्रंथ गुरु मानता है जिससे उसको सम्यक्त्व हुई या उसने जिसकी गुरुधारणा ले रखी है। क्या वह सम्यक्त्वी है ? (1) हाँ (2) नहीं
76	सिर पर धगधगाते हुए अंगारों से गजसुकुमाल अणगार को असह्य वेदना हो रही थी। क्या ऐसा मानना सही है ? (1) हाँ (2) नहीं
77	वीर्य गुण की विभाव पर्याय है .....
78	पति की आयु बढ़े, सास-सुसर प्रसन्न रहें, गृहस्थ पत्नी/बहू-पुत्रवधू करवा चौथ का व्रत करती है, आदि । फिर भी उसकी सम्यक्त्य सुरक्षित है। (1) हाँ (2) नहीं
79	दया, अनुकम्पा, करूणा, अहिंसा शुभ भाव है। कर्मबंध है। (1) हाँ (2) नहीं
80	क्या 'मठाधीश' या तांत्रिक-मांत्रिक-श्रमण को प्रासुक और एषणीय आहार देने से आहारदाता श्रमणोपासक को आत्मसमाधि प्राप्त होती है ? (1) हाँ (2) नहीं
81	मनुष्य भव में आकर भी आहार-भय-मैथुन-परिग्रह संज्ञा में रत रहे तो क्या पशुवत जीवन जीकर मर जाओगे, पशु बनोगे, यह कथन सत्य है क्या ? (1) हाँ (2) नहीं
82	देव-गुरु-धर्म में अगाध-श्रद्धावान गृहस्थ है, अतः अपने कुल के देवता या देवी, दादा या दादी को भोग चढ़ाता है, सभी परिजन उसे पूरा खाकर समाप्त करते हैं, क्या सम्यक्त्वी है ? तर्क है - अपने पितृ-पुरुष का तो उपकार मानकर, यह करने से, सम्यक्त्व कायम रहती है। (1) हाँ, ठीक है (2) नहीं, ठीक नहीं है।
83	(क) कर्म निकाचित किस कारण और कब हो जाता है ? ..... (ख) क्या उसे भोगे बिना छुटकारा (मुक्ति) नहीं है ? (1) है (2) नहीं है।
84	संसारस्थ दशा में तो जीव और शरीर एकमेक होकर रहते हैं, 14वें गुणस्थान के अन्तिम समय पर पृथक-पृथक होते हैं। क्या यह सत्य है ? (1) हाँ (2) नहीं
85	एक व्यक्ति स्वयं को सम्यक्त्वी मानता है परन्तु पतिव्रत धर्म भी धर्म है, या पुत्र-पुत्रियों का पालन करना, उनका विवाह करना भी धर्म मानता है। क्या सही है? (1) हाँ (2) नहीं
86	सनातनी या वेदान्ती मानते हैं कि परमात्मा जीवों को सुख-दुख देता है। जैन भी ऐसा मानते हैं। (आप भी) (1) हाँ (2) नहीं
87	उत्पाद और व्यय तो माना परन्तु जिसमें हो रहा है, उसकी ध्रुवता नहीं मानी। कौन ? (1) आचार्य वृहस्पति (2) महात्मा बुद्ध (3) कृष्ण (4) गोशालक
88	कौनसी संज्ञा से सर्वाधिक दुखदाता कर्म बंधते हैं ? .....
89	पुण्य प्रवृत्ति का फल इन्द्रिय सुख, प्रतिफल है, प्रशस्ति, वाहवाही की इच्छा है या

	ऐसा हो रहा है तब प्रसन्न होता है, तब वह पाप हो गया। आपका मत दें। (1) हाँ (2) नहीं
90	प्रमत्त साधु के प्रमाद में और अति भोजी के (आलस्य) प्रमाद में क्या अन्तर है ? (दो वाक्य में) ....
91	प्रकाश और अन्धकार एक साथ नहीं हो सकते, ऐसे ही, दो परस्पर विरोधी गुण निर्विकारिता और विकार ग्रस्तता एक साथ नहीं हो सकते। (1) हाँ (2) नहीं
92	अहिंसा धर्म का पारमार्थिक स्वरूप ..... सत्य धर्म का पारमार्थिक स्वरूप ..... अचौर्य धर्म का पारमार्थिक स्वरूप ..... ब्रह्मचर्य धर्म (तप) का पारमार्थिक स्वरूप .....
93	जीव के साथ शरीर कब जुड़ा ? (1) जब परमात्मा ने जोड़ा तब से (2) अनादि से
94	एक मानता है कि इन्द्रिय विषयों में सुख है। क्या वह सम्यक्त्वी है ? (1) हाँ (2) नहीं
95	अजमेर की 'दरगाह शरीफ' पर चादर चढ़ाने से, दर्शन करने से लाखों मनुष्य सुखी होते हैं, दुख-दारिद्रय मिटते हैं, एक जैन भी ऐसा करता है। क्या सम्यक्त्वी है ? (1) हाँ (2) नहीं
96	जीव की अनादि की, अनन्त काल की भूल है .... को अपना जानना .....
97	कुछ जैन धर्मवालों ने भी असीम इच्छाओं या तृष्णातुरता से सीमित प्राकृतिक संसाधनों का भारी दोहन किया है। करते हैं। क्या वे भयंकरतम पाप कर्मबंध करके दुर्गति में जाएंगे ? ऐसा मानना क्या (1) सत्य है। (2) असत्य है।
98	क्या उणोदरी और रस परित्याग तप, अनशन तप से उत्कृष्ट से उत्कृष्टतर हैं ? (1) हाँ (2) नहीं
99	सम्यक्त्वी आत्मसाधक गृहस्थरूप में रहते हुए कैसी साधना करेगा ? तीन-चार पंक्तियों में लिखें। ....
100	संवर के क्रम को समझाएं : (पांच पंक्तियाँ) ....

101	''करूं तो मरूं, न करूं तो तिरूं'' दो वाक्यों में समझाएं। ....
102	परिग्रह पाप का बाप है। चार-पाँच वाक्यों में सिद्ध करें। ....
103	गजसुकुमाल अणगार ने, भिक्षु प्रतिमा साधना में, कैसे सिद्ध किया कि एक दिन पूर्व सुना कि शरीर मैं नहीं हूँ, मेरा नहीं है, शरीर के माध्यम से होने वाली वेदना मेरा गुण नहीं है। क्रोधादि मेरा स्वभाव नहीं है, कर्म पुद्गल है, वह मुझसे पूर्णतः भिन्न है, संयोगी है, मैं असंग आत्मा हूँ। (पाँच वाक्य। अपने शब्दों में) ....
104	स्वाध्याय और कायोत्सर्ग से निर्जरा कैसे होती है ? समझाईए। चार वाक्य में ....
105	आत्मा के चार गुण मुख्यता से कहे गए हैं। चारों गुण एक साथ उल्टे चलते हैं, चारों गुण एक साथ सुलटे चलते हैं। कैसे ? पहले किस गुण को प्रकट करें, कैसे करें ? समझाएं - (अपने शब्दों में पांच वाक्य) ....
106	बाह्मण अर्थात् ..... क्षत्रिय अर्थात् ..... वैश्य अर्थात् ..... चांडाल अर्थात् .....
107	मोक्षार्थ-आत्मार्थ साधने में वेष और लिंग का कोई महत्व नहीं है। चार-पाँच वाक्यों में सिद्ध करें। ....
108	ज्ञान-दर्शन-चारित्र की एकतारूप मोक्षमार्ग है। इसे दो तीन वाक्यों में समझाएं। ....

जैनत्व क्या है - लघुग्रन्थ में आए कठिन शब्दों का विवेचन

अशोक विहार निवासी श्री आर. के. जैन ने ग्रन्थ में लगने वाले कठिन शब्दों का विवेचन हिन्दी में दिवालिए नई पीढ़ी वालों के प्रति दया करके उदयमुनि जी म. सा. को इन शब्दों का विवेचन करने की विनती की। अतः प्रस्तुत है।

1. **मनातीत, वचनातीत, कायातीत** = चारों घाती कर्मों का क्षय होने पर वे अरिहंत हो जाते हैं। केवलज्ञान, सकल (पूर्ण) प्रत्यक्ष ज्ञान होने से अब उन्हें मन से मनन करने की, वचन से चिंतन करने की, इन्द्रियों से सुनने-देखने के लिए उपयोग में लेने की आवश्यकता नहीं पड़ती है अतः वे मन, अतीत हो गया मनातीत, वचनातीत, कायतीत, इन्द्रियातीत, अतीन्द्रिय हो गए, कहा जाता है।

2. **मारणन्तिक वेदना** = मरण, मृत्यु के समय होने वाली अत्यन्त वेदना को मारणन्तिक वेदना कहते हैं।

3. **समाधारणता** = एकाग्रता हो जाना, परमशान्ति, परम सन्तोष, पूर्ण समाधान, अपूर्व आनन्द आना। संयमी के 27 गुणों में आता है। परम्परा फल-सिद्ध-बुद्ध-मुक्त हो जाता है।

4. **केवलिप्ररूपित** = **अरिहंत**, जिन्होंने कर्म शत्रुओं का नाश कर दिया, **जिन** जिन्होंने विषय-कषाय आदि समस्त विकारों को जीत लिया, जिनका ज्ञानगुण, केवलज्ञान पर पड़ा आवरण (पर्दा) मात्र अपने आपको जानने से, निरन्तर जानते रहने से, हट गया, वे **केवली**, तीनों समान अर्थ वाले मानना। वे ही तीर्थ की स्थापना से तीर्थंकर होते हैं। ऐसे केवली तत्त्वों, द्रव्यों के स्वरूप का प्रतिपादन, विवेचन करते हैं, समझाते हैं, उसे केवलि प्ररूपित (प्रज्ञप्त) वाणी कहते हैं।

5. **निर्ग्रंथ** = जिन्होंने राग-द्वेषादि गांठो-ग्रंथियों का छेदन-भेदन कर दिया, वीतराग गुण प्रकट कर लिया वे निर्ग्रंथ मुनि कहलाते हैं।

6. **प्रतिक्रमण** = अपने पूर्वकृत पापों की अन्तःकरण से आलोचना, पुनः न करने का संकल्प।

7. **गमनागमन** = गमन, अर्थात् चलकर जाना, पुनः वापस चलकर आना, गमन-आगमन।

8. **उच्छिष्ट आहार** = गंदगी शरीर के मुख्य नौ द्वारों, दो कान, दो आँखें, दो नथुने, एक मुंह एक मूत्र नली, एक मल-द्वार से जो गंदे, दुर्गंधयुक्त पदार्थ निकले-उच्छिष्ट जिस आहार को गृहस्थ खाने योग्य नहीं फेंकने योग्य मानता है, या फेंकने जा रहा है, उग्र तपः साधक उसे ग्रहण लेते हैं, उसे उच्छिष्ट आहार कहते हैं।

9. **परठने** = ऐसे गंदे पदार्थों को ऐसे उपयोग पूर्वक, यतना से, सावधानी से विसर्जित करना, पटकना, संयमी की विशेष-प्रक्रिया, समिति होती है। उसे प्रतिष्ठापना, परठना समिति कहते हैं। विसर्जित करने, पटकाने, डालने, फेंकने, थूकने में स्थावर (पृथ्वी-पानी-अग्नि-वायु-वनस्पति) या त्रस जीवों की हिंसा-विराधना न हो, मनुष्यों को क्लेश न पहुंचे सावधानी रखना अनिवार्य प्रक्रिया है।

10. **विराधना** = परठने में इतनी यतना, विवेक रखे कि उक्त प्रकार के किसी भी जीव को दुख न पहुंचे, मूर्च्छित न हो जाएं, मर न जाएं। यदि ऐसे जीवों का विराधना हो तो अहिंसा महाव्रत अतिचार दोष लगता है। तुरंत धिक्कार कर धो देता है।

11. **निग्रह** = जीव, मुख्यतः मनुष्य, पाँचों इन्द्रियों के माध्यम से जो भोग भोगकर प्रसन्न होता है, मजा लेता है, उनमें रस लेता है, रुचिपूर्वक सेवन करता है, उससे अनन्त कर्म बांध लेता है। ज्ञानी बोध देते हैं, इन्द्रियों को जीतो, वश में रखो, नियंत्रण करो, उसे इन्द्रिय निग्रह कहा। इन्द्रिय-निग्रह ही तप है।

12. **निवृत्त** = जिन-जिन प्रवृत्तियों-कार्यकलापों, क्रियाओं से कर्म का आना और बंधना होता है, उन्हें बंद करना, प्रवृत्ति से परे हो जाना, निवृत्ति कहलाती है। जो साधक हटे।

13. **चतुर्गतिरूप** = देव, मनुष्य, तिर्यंच और नरक, ये चारों मिलकर चतुः गति = चतुर्गति रूप संसार है। शुभाशुभ, पुण्य-पाप करते-करते यह जीव अनन्तकाल हो गया, चतुर्गति संसार में जन्म-मरण का दुख पा रहा है।

14. **गच्छ** = साधु-साध्वी-श्रावक-श्राविकाओं के एक संगठन-झुंड, समूह, एक नायक, अधिपति के मार्गदर्शन में साधना करने वाले समूह को गच्छ भी कहते हैं।

15. **सम्यक्त्वी** = जिस मुमुक्षु ने द्रव्यों का, तत्त्वों का जैसा स्वरूप है वैसा समझ लिया है आत्मा और शरीर, चेतन और जड़ के बीच भिन्नता भेद-ज्ञान कर लिया, जिसने

देव-गुरु-धर्म का यर्थाथ स्वरूप समझ लिया, सम्यक् स्वरूप आत्मसात, हृदयंगम कर लिया, उसमें दृढ़ श्रद्धा, प्रतीति रूचि हो गई, काया की अशुचिता, अनित्यता, इन्द्रिय विषयों के भोगों की निस्सारता संसार की असारता कषायों, क्रोध-मान-माया-लोभ इन पापों की भयंकरता, जन्म-मरण के अनन्त दुखदाता समझ लिया, उनसे निवृत्त, विरत होता जाता है। उसे सम्यक्त्वी कहा जाता है।

16. **वैमनस्य** = शत्रुता, विद्वेष, वैर का भाई है।

17. **आराधक** = जन्म-मरण के कारणों को जानकर, उनसे मुक्ति का उपाय करने वाला, परम सद्गुरु, सद्गुरु के बोध-प्रेरणा, उपदेशों, बताई साधना पद्धति के अनुसार, आज्ञानुसार आत्मज्ञान, आत्मदर्शन, आत्मा में रमणता करता है उसे आराधक और उनसे विपरीत आचरण करने वाला, विराधक कहलाता है। आराधक जन्म-मरण से मुक्त हो जाता है, विराधक चतुर्गति रूप संसार में भटकता है। दुखी होता है।

18. **रत्नत्रय धर्म** = ज्ञान, दर्शन, चारित्र ये तीन रत्न हैं, उनसे आत्मा का शुद्ध परमवीतराग स्वरूप प्रकट होता है, मोक्ष हो जाता है।

19. **वीतराग** = जिसका राग गल गया, चला गया, व्यतीत हो गया। राग व्यतीत हो गया तो द्वेष भी व्यतीत हो गया। वीतराग गुण प्रकट हो गया। अज्ञान और मिथ्यात्व भी मिट गया उसे वीतरागी, परम वीतरागी कहते हैं।

20. **पुद्गल** = जिसमें पूरण-गलन, संयोग-वियोग, सड़न-गलन हो, जिसमें वर्ण-गंध-रस-स्पर्श हो, इनमें प्रतिक्षण, प्रति 'समय' परिवर्तन हो, अवस्था, पर्याय बदलती हो, पर्यायान्तर होता है परन्तु स्थायी-ध्रुव रहता है, उसे पुद्गल द्रव्य कहते हैं। अजीव है, जानने-देखने-अनुभव करने का गुण नहीं है। जैनदर्शन का विशेष शब्द है। इसका समान अर्थी कोई शब्द नहीं है।

21. **ध्रुव** = सदाकाल रहे, जिसमें ध्रुवत्व, ध्रुवता गुण है, छहों द्रव्य ध्रुव हैं, नित्य हैं, शाश्वत हैं, नियत हैं, अवस्थित हैं, अक्षत-अव्यय हैं। कभी क्षति, हानि नहीं होती, कोई भी गुण कभी घटता नहीं, व्यय को प्राप्त नहीं होता, अव्यय है। ध्रुव शब्द के सहवर्ती पर्यायवाची।

22. **परिणामी** = प्रत्येक द्रव्य नित्य भी है और नित्य परिणमन, अवस्थान्तर पर्यायान्तर भी होता है। द्रव्य में कहें या गुणों में कहें, दोनों सदा एक जुट ही रहते हैं, उनमें प्रति समय पर्यायान्तर भी नियमतः होता है, उसे परिणामी कहते हैं। नित्य परिणामीं जैन दर्शन का वैशिष्ट्य है।

23. **पर्याय** = अवस्था, रूप निरन्तर बदलता है। शैशव से बाल से यौवन से वृद्ध। आम का हरापन पीलापन में, पीलापन कालेपन में बदलने को पर्याय कहते हैं।

24. **प्रपंच** = निरर्थक ही कर्म बंधवाने वाले खोटे कार्यों के भाव आना, खोटी प्रवृत्ति में पड़ना छल कपट का भाई है - प्रंपच।

25. **सांख्यमती** = जो यह मानता है कि विकार तो प्रकृति में होते हैं और आत्मा में विकार कभी होते ही नहीं हैं, आत्मा (पुरुष) तो त्रिकाल निर्विकार ही, कूटस्थ (एक जैसा) नित्य रहता है। वस्तुतः निर्विकार स्वभावी है, उसका ज्ञान-भान न हो तब तक विकार भी आत्मा ही करता है - ऐसा महावीर मानते हैं।

26. **निराकुल** = किसी इन्द्रिय विषय, इच्छा-पूर्ति हेतु, किसी तनाव में तरह-तरह की उधेड़बुन, जंजाल में, चिन्ता में पड़ा रहता है, उसे आकुल-व्याकुल होना कहते हैं। उन सब से परे निराकुल है। निराकुलता आत्मा का त्रैकालिक गुण है। आकुलता-व्याकुलता आर्त्तध्यान है, कर्म बंधक है।

27. **निमित्त** = जिसके कारण से मनुष्य राग या द्वेषादि भाव करता है, वह व्यक्ति-वस्तु-स्थिति कोई भी हो, निमित्त कारण कहलाता है। निमित्त कर्मबंध का कारण नहीं है, निमित्त की विद्यमानता में जीव स्वयं विकार ग्रस्त होकर कर्मबंध करता है। निमित्त कर्त्ता नहीं है।

28. **संग्रहित** = जो-जो भोग साधन जोड़ते हैं, उसे संग्रह कहते हैं।

29. **संचित** = संचय करना, एकत्र करना, धन-धान्यादि, धन-वैभव भी इकट्ठा करता है, उससे कर्म का भी संचय होता है, संचित कर्म फल भी देते हैं।

30. **उत्पाद-व्यय** = उत्पन्न होना, व्यतीत होना। द्रव्य के गुणों में परिवर्तन, अवस्था बदलने में इन शब्दों का प्रयोग होता है। आम की हरी (अवस्था) पर्याय का व्यय हुआ, पीली

पर्याय का उत्पाद हुआ। आत्मा के ज्ञान गुण की, अज्ञान भाव, पर-द्रव्य को अपना जानना, स्वात्मा को न जानना, ऐसी विभाव पर्याय का व्यय हुआ। स्वयं को स्वयं का जानने रूप स्वभाव पर्याय का उत्पाद हुआ। जैनधर्म-दर्शन के विशिष्ट शब्द हैं।

31. **विकारग्रस्त** = इन्द्रिय विषयों के भोग-भोगने, भोगने, मजा लेने को विकार भाव कहेंगे, उसमें गृद्ध, डूबे हुए को कहेंगे विकारी या विकारग्रस्त।

32. **ज्ञानावरण** = 'पर' पराए को अपना जानना, अपने को न जानना, इससे ज्ञान का ढंकना कहेंगे। मेरे ही विपरीत भाव, अनादि अज्ञान से ज्ञान गुण पर पर्दा पड़ गया। इसे कहेंगे ज्ञानावरण कर्म।

33. **क्षण भंगुर** = एक क्षण में, न जाने किस क्षण में यह शरीर छूट जाए, आयुष्य कर्म पूरा हो जाए, शरीर और इससे जुड़े सभी परिजन-परिचित, भोग साधन, धन वैभव छूट जाते है। ऐसा छूटना, आत्मा से संयोगित सब कुछ न जाने कब छूट जाए, उसे क्षणभंगुर कहा।

34. **त्रैकालिक** = भूत, वर्तमान, भविष्य, जो तीनों कालों में रहे।

35. **अनुरक्त** = रक्त अर्थात् उसी भोग में, भोग साधन, परिजन, परिचित में बहुत रचा-पचा।

36. **अनुरंजित** = उक्त सभी में प्रसन्न होना, रंजे रहना, रंजन अर्थात् उसमें रमण।

37. **गृद्ध** = उक्त सभी में धंसा-घुसा-पड़ा डूबा रहना।

38. **आसक्त** = जो-जो व्यक्ति, वस्तु, साधन, स्थितियाँ अच्छी लगें, उनसे चिपके रहना। इसे आसक्ति (क्रिया) कहते हैं। करने वाला आसक्त-गृद्ध अनुरक्त कहलाता है।

39. **अनासक्त** = उक्त आसक्त का विलोम।

40. **कार्मण शरीर, कार्मण वर्गणा** = औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तेजस, कार्मण, मनोवर्गणा, वचन (भाषा) वर्गणा, काय वर्गणा, ये आठों वर्गणाएं वर्ण-गंध-रस-स्पर्श गुणवाली पुद्गल हैं। लोक में सर्वत्र कार्मण वर्गणा के पुद्गल-परमाणु ठसाठस भरे हैं। जीव के विकार (विभाव) भाव करते ही वे आकर कर्म रूप बदलते हैं, बद्ध स्पृष्ट होते हैं। आठ कर्म कार्मण वर्गणाओं से बनते हैं, सब मिलकर एक सूक्ष्मतम शरीर बनते हैं।

उसे कार्मण शरीर कहते हैं। 14वें गुणस्थान पर, औदारिक-तेजस-कार्मण तीनों छूट जाते हैं। सिद्ध हो जाता है।

41. **लेश्या** = जीव जो विकार भाव करता है, उसे भावलेश्या कहा, विकार भावों की गाढ़ता-मंदता के अनुसार वर्ण-गंध-रस-स्पर्श रूप होना द्रव्य लेश्या है। जीव के साथ कर्मों को चिपकाना लेश्या करती है।

42. **साताकारी** = जो शरीर, इन्द्रिय सुखादि दे उसे साताकारी (कर्म) दुखादि दे उसे असाताकारी कहा।

43. **वितृष्णा** = अन्य के प्रति घृणा तिरस्कार के भाव की गाढ़ता।

44. **बल सौष्ठव** = शरीर संबंधी बल अधिक हो, शरीर की रचना आकर्षक हो।

45. **तंद्रा** = नींद की श्रेणियों में मंदतम्।

46. **प्रमाद** = आत्मभावों में रमणता को अप्रमाद या अप्रमत्तता कहा, इससे उल्टे को प्रमाद कहा। ज्ञाता-द्रष्टा (स्वभाव) अप्रमत्तता है, अ-प्रमाद है, इससे विपरीत सारा प्रमाद है।

47. **श्वासोच्छवास** = श्वास लेना, श्वास छोड़ना, दोनों से मिलकर बना शब्द है।

48. **निकाचित (कर्म)** = जिस भव में गाढ़ से गाढ़तम, तीव्र से तीव्रतम विकार भाव हो, वैसी ही श्रेणी के कर्म बंधते हैं। उसी भव में उसका अन्तःकरण से पश्चाताप-धिक्कार कर धो दे तो ठीक है। धुल जाता है। वह भव पूरा हो जाने पर जिस गाढ़ भाव से जैसा कर्म बांधे, अगले किसी भी भव में वह वैसा ही उदय में आकर, किसी निमित्त को विद्यमान कर फल देता है, देता ही है, टलेगा नहीं। निमित्त के अनुसार कार्य करे तो पुनः सात-आठ कर्म बंधे, न करे तो, प्रदेश वेदन होता है, विपाक वेदन, उससे दुखी न हो, दुख का अनुभव न करे, आत्मानुभव होता रहे तो निर्जरा हो जाती है।

49. **रुग्ण** = रोगग्रस्त, बीमार, रोगी।

50. **लेशमात्र** = एक अंश में भी नहीं।

51. **व्यसन** = ऐसी बुरी आदत, कुटेव कि जीवन भर न छूटे उसे कुव्यसन (सात हैं) कहा। अनन्त जन्म-मरण का अनन्त दुख भोगेगा। शिकार, मांसाहार, मद्यपान, पर-स्त्री

(पर-पुरुष) गमन, वेश्यावृत्ति, जुआ और घपले-घोटाले-गबन वाली महाचोरी- ये सात हैं। सीधे नरक में।

52. **विभाव** = आत्मा के स्वभाव, ज्ञाता-द्रष्टा भाव को छोड़कर शुभाशुभ भाव।

53. **विभीषिका** = एक या अनेक मनुष्यों को मारने, घात-उपघात करने वाले मनुष्यों-मनुष्यकृत कुकृत्य और युद्ध-महायुद्ध, प्रदूषण, पर्यावरणनाश उससे प्राकृतिक प्रकोप आदि।

54. **आधिपत्य** = व्यक्ति, व्यक्तियों, धन सम्पदा, किसी भी वस्तु, राज्यसत्ता तक पर कब्जा।

55. **अक्षय पद दाता** = जिस पद का कभी क्षय न हो जैसे सिद्ध पद, शुद्धात्मपद को देनेवाला है, ब्रह्मचर्य में वास।

56. **पूर्वोपार्जित** = इस क्षण, इस भव, पर-भव, भवों भव में पहले कभी भी विकारी भावों से पैदा किए कर्म।

57. **आत्मसात** = आत्मा में, अन्तरभावों में जमा हुआ है कि शरीर मैं हूँ, मेरा है, परिजन-धन-वैभव मैं हूँ, मेरे हैं इनसे सुख मिलता है आदि भाव, अन्दर में पक्के हैं। अब अन्दर में, आत्मा में, भावों में पक्का हो जाए कि मैं आत्मा, शेष कोई मेरा नहीं। साधना का प्रारम्भ, मोक्ष। आत्मा में, भाव से पक्का हो जाना आत्मसात कहलाता है।

58. **सुखामृत** = आत्मा के स्वयं के सुख रूप अमृत का पान।

59. **द्रव्याश्रव** = जिस क्षण 'समय' जीव विकार भाव (शुभाशुभ, राग-द्वेषादि) भाव करता है, उसे भावाश्रव, भावों से आश्रव (कर्म का आना) होता है उससे ज्ञानावरणादि (द्रव्य) कर्मों का आना होता है, उसे द्रव्याश्रव कहा। वैसे ही कर्म-बंध भी मूलतः आत्मा के विकारी भावों से ही होता है, उसे भावबंध कहा। आश्रवपूर्वक बंध होता है। उससे ज्ञानावरणादि (द्रव्य) कर्म का बंध होता है, उसे द्रव्यबंध कहा।

60. **उपादेय** = जो भाव, जो कार्य करने, आचरण करने योग्य हो, जिससे मुक्ति मिले।

61. **विपन्न** - धन वैभव, भोगसाधन प्रचुर मिले हैं, उसे 'सम्पन्न' कहा है, उसका विलोम (उलटा) विपन्न, दीनहीन, अकिंचन्य (गरीब से गरीबतम) निर्धनतम।

62. **निकृष्ट** - पूर्व में आया - उत्कृष्ट, उत्कृष्टतर, उत्कृष्टतम, सर्वोत्तम-सर्वोत्कृष्ट, उसका उलटा निकृष्ट। बहुत बुरा, घृणा करने योग्य भाव, व्यक्ति-वस्तु आदि।

63. **सौहार्द्र्य** - परिवार में, समाज में स्नेह, प्रेम, वात्सल्य, आदर-सम्मान-सेवाकार्य, परिवार में परस्पर उक्त समस्त भाव सौहार्द्र्य में, सामंजस्य में सम्मिलित हैं। परिवार-समाज से राजा-दंडाधिकारी सभी के द्वारा प्रशंसनीय है, आध्यात्म, आत्मसाधनार्थ धिक्कारने योग्य।

64. **ऋजुता** = सरलता, विनम्रता, कोमलता, लाघवसम्पन्न अर्थात् अपने प्रति लघुता का भाव, भद्रिक प्रकृति।

65. **सामंजस्य** = परिवार-समाज में परस्पर समानता, सौम्यता, समायोजन, संगति बैठाने।

66. **निस्पृहा** = बाह्य में कोई भी इच्छा, कामना, चाहना, चाह, वासना, तृष्णा आदि भाव नहीं होना। ऐसे विकार भाव जिसे न आए वह निस्पृह है।

67. **मनोज्ञ** = किसी इन्द्रिय विषय की पूर्ति मन के अनुकूल, मन में, आत्मा में अनुकूल लगे।

68. **अमनोज्ञ** = उक्त की अपेक्षा उल्टी, उल्टा मिलना।

69. **अलिप्त** - चिपकना, उस व्यक्ति-वस्तु-स्थिति में लोटपोट हुआ कि कर्मबंध। न चिपके।

70. **विरति** = मनोज्ञ, मनभावन, मनोनुकूल विषयसाधन मिलने पर रति, न मिलने पर अरति, इन दोनों से परे हो जाना विरति। रति, अच्छा लगना, अरति बुरा लगना। इष्टानिष्ट, ठीक-अठीक से परे हो जाना।

71. **गुण-परिणमन** = अपने ज्ञानादि गुणों में रमणता, स्व-गुण-परिणमन से मुक्ति, पर-द्रव्य पुद्गल या पौद्गलिक शरीर के वर्ण-गंध-रस-स्पर्श में रमण, परिणमन से चतुर्गति।

72. **निर्विकल्प** = यह-यह कार्य तो मैंने कर लिया है, ये-ये कार्य मुझे करने हैं ऐसे संकल्प-विकल्पों से भारी कर्मबंध, संकल्प-विकल्पों-जाल-जंजाल से परे रहना।

73. **अनुभवगम्य** = जो स्वयं के अनुभव में आए, वह अनुभवसिद्ध, अनुभव गम्य है।

74. **परिताप** = दूसरे जीवों को जो-जो दुख देते हैं, उसे परितप्त, परितापित करना, तरह-तरह के कष्ट-दुख देना, उनमें से एक परिताप, गर्मी पहुंचाना। भारी कष्ट देना।

75. **दर्शनावरणीय** = अपने ही गुण दर्शन (देखना) का उपयोग पर-द्रव्य को देखने में लगाए तो दर्शन, स्व-गुण पर पर्दा पड़ता-बढ़ता-घनीभूत होता है, कर्म हुआ-दर्शनावरणीय। अपने स्वयं के दर्शन गुण से 'पर' पराये, शरीरादि से दृष्टि हटाकर आत्मदृष्टि करना, दर्शनावरणीय कर्म की अंश-अंश निर्जरा, निरन्तर आत्मद्रष्टा, तब केवल दर्शन।

76. **प्रतिकार, प्रतिवार, प्रतिरोध, प्रतिहार, प्रतिकार** = सभी समानार्थक मानें। किसी ने मेरे साथ बुरा किया, प्रतिवार, पुनः उस पर आक्रमण-प्रहार विरोध आदि। सब में घटा लें।

77. **परिपालना** = पालन पूरा पालना, मानना, ('परि' उत्सर्ग है) विशेषतः तीर्थंकर सद्गुरु की आज्ञादि का पूर्णतः पालन करना।

78. **आदाननिक्षेप** = संयमियों की पांच समितियों में से एक है। वस्त्र पात्रादि का रखना-उठाना इतनी यत्ना, विवेक से, सावधानी से करना कि स्थावर या त्रस किसी भी जीव की हिंसा-विराधना न हो।

79. **आस्वाद** = इन्द्रिय-विषयों का बेस्वाद छूटे तो आत्मा के स्वयं के सुख का स्वाद, आस्वाद कहलाता है। अवांछनीय - जिसकी वांछा (चाहना) करने योग्य ही नहीं - ऐसे ये इन्द्रिय-विषयों का विषपान छूटे तो आत्मा के स्व-सुख का आनंद आना।

80. **अनाचरणीय** = जिसका आचरण करने से, आत्मा को छोड़कर बाह्य में चरण, चलना, मजे लेना आदि दुराचरण से अनन्त कर्म और अनन्त जन्म-मरण का दुख, ऐसे अनाचार का सेवन, अनाचरणीय है। आचरण करने योग्य ही नहीं है।

81. **तुच्छ और त्याज्य** = प्रातः काल 'जंगल', निवृत्ति हेतु जाते थे, मलर (विष्टा) मूत्र छोड़कर आए, उस वस्तु को तुच्छ और त्याज्य (छोड़ने योग्य) कहा। ऐसे ही ये इन्द्रिय विषयों के भोग और भोगने के सभी साधन तुच्छ वस्तु, छोडने योग्य मानने में आ जाए तो मोक्ष-साधना और मोक्ष।

82. **उत्कृष्टतम** = संसार में जितनी अच्छी से अच्छी वस्तुएं मानी, उसमें सर्वश्रेष्ठ है मोक्ष सुख, मुक्ति। अच्छी, बहुत अच्छी, सबसे अधिक अच्छी, तीन श्रेणियों में तीसरी, सर्व में उत्कृष्ट, सर्वोत्कृष्ट।

83. **पर्यायवाची** = एक शब्द के समान अर्थ देने वाले शब्द। कृष्ण, बालकृष्ण, गोपालकृष्ण, कृष्ण कन्हैया, काना ऐसे कई।

84. **परिसीमा** = भोगों की, भोग साधनों की, दुष्प्रवृतियों की, परिग्रह की, समारंभ की पापारंभ की कार्य-व्यवसाय की सीमा-रेखा खींचना, ऐसी रेखा कि वह लक्षमण-रेखा बन जाए, इतनी कड़ी सीमा है - परिसीमा।

85. **क्रियान्वित** = जिसे करने की ठान ली वह पूरा कर दे, उसे क्रियान्वयन, क्रियान्विति।

86. **प्रत्याख्यान** = जिसे तुच्छ-त्याज्य मान लिया, घोर कर्मबंधक, अति दुखदायी भवोंभव भटकाने वाला मान लिया, ऐसे तुच्छभाव, विकारभाव, विभाव भाव पूर्णतः छोड़ना।

87. **प्रतिक्रमण** = आत्मा को निज गुणों की सीमा में ही रहना चाहिए, उसीसे जन्म-मरण से मुक्ति है, अपनी सीमा को उलांघकर शरीर के स्वभाव में, शरीर के वर्ण-गंध-रस-स्पर्श गुणों में घुसे, अतिक्रमण किया, कदम पीछे हटा लेना, आत्मा में लौट आना, ज्ञाता-द्रष्टा-स्वरूपरमणता हो जाए, आत्मा का ऐश्वर्य उसे प्रतिक्रमण कहते हैं।

88. **अध्यवसाय** = राग-द्वेषादि भाव, शुभ या अशुभ भाव, उन्हीं में परिणमन, रमणता, रमना, उसी से कर्म का आना और बंधना। मन के शुभाशुभ व्यापार को अध्यवसाय कहा।

89. **प्रशस्त** - शुभ, शुभतर, शुभतम जो भाव जीव के हों वे प्रशस्त, प्रशस्ततर प्रशस्ततम।

90. **प्रवृत्त** = जिन-जिन कार्यों में, शुभ या अशुभ में, राग या द्वेष में, मन-वचन-काया के योग जुड़ रहें हैं वे सभी प्रवृत्तियाँ पुण्य-पाप कर्मबंधक है, जो उसमें लगा है, प्रवृत्त है।

91. **निष्क्रिय** = अशुभ, अशुभतर, अशुभतम, शुभ, शुभ्रतर, शुभ्रतम, समस्त बाह्य क्रियाओं से परे हो जाता है, वे निष्क्रिय है, जो ऐसा निष्क्रिय है वह निःकर्मा, निःकम्मा, कर्मरहित, सिद्ध हो जाता है। शुद्ध-बुद्ध-मुक्त हो जाता है। क्रिया है तो कर्म है क्रिया से रहित है

तो कर्म से रहित है। व्यावहारिक जगत में जो कुछ कार्य नहीं करे उसे भी निष्क्रिय, निकम्मा कहते हैं। सिद्ध परमात्मा भी ऐसे ही हैं।

92. **अव्याबाध** = जिस आत्मिक सुख, आत्मानन्द में, ज्ञान-दर्शन-सुख-वीर्य गुणों में कोई भी बाधा (रुकावट) एक 'समय' के लिए भी नहीं आती, ऐसे सुख को अव्याबाध सुख कहा है। अपेक्षा से, अरिहंत परमात्मा को भी है। अघाती कर्म शेष होने से कहा नहीं गया कि अव्याबाध है। आठों कर्मों के क्षय से अव्याबाध सुख प्रकट हुआ, ऐसा कहा गया। ऐसे ही अव्याबाध अनन्त सुखों का भंडार, मैं (आत्मा) हूँ।

93. **संसारस्थ** = जब तक चतुर्गतिरूप संसार में जीव भटकता है उसे संसारस्थ कहा।

94. **आत्मरमणता** = पर-द्रव्य में, पर-भाव में, शुभाशुभ भावों में, विषय-सौख्य-सुखों में रम रहे हो, मानो, आत्मा में रमणता, रमना नहीं है। चौथे गुणस्थान से आत्मा में कुछ, कुछ काल रमता है, बढ़ते-बढ़ते 13वें गुणस्थान पर पूर्णता हो जाती है। अविरत सम्यक्त्वी चौथा, सयोगी केवली, तेरहवां गुणस्थान कहा जाता है। आत्मा में ही रमना निरन्तर है।

95. **अतीन्द्रिय** = जिसमें इन्द्रियाँ, मन-वचन-काया निमित्त नहीं हैं, फिर सीधे आत्मा को आत्मा का सुख की (इन्द्रिय-विषयों से विमुख करने पर प्राप्ति) अतीत हो गई हैं, इन्द्रियाँ, उस सुख को अतीन्द्रिय सुख कहा है। चौथे से प्रारंभ, 13वें पर पूर्णता है।

96. **परिष्ठापना** = पांच समितियों में से एक है। शरीर को नौ मुख्य द्वारों से जो गन्दे पदार्थ निकलते हैं उन्हें इतनी यत्ना, सावधानी, विवेक से परठना, पटकना, डालना, फेंकना कि किसी भी जीव की हिंसा-विराधना न हो, मनुष्यों को क्लेश न पहुंचे।

97. **संवृत-संवर** = विकारी भावों, विभाव भावों, राग-द्वेष-मोहादि भावों, शुभ या अशुभ भावों से परे हट जाना, कर्म का संवर, कर्म आने के द्वार बंद करना, ऐसा करने वाला साधक, आत्मा द्वारा आत्मा में संवृत कहलाता है।

98. **कुशाग्र** = कुश अर्थात् तिनका, उसके अग्रभाग पर जो वस्तु आ जापए, इतना सा भोजन लेना, फिर मासखमणतप। 'भोजन कुशाग्र भर करना' ऐसा आया। जिसकी बुद्धि बहुत तेज होती है, उसे कुशाग्र बुद्धिवाला कहते हैं।

99. **कोपाविष्ट** = कोप या क्रोध में पगला जाना, कोप से आवेष्ठित, लिप्त होना।

100. **इष्टकारी-अनिष्टकारी** = जो आपको अनिष्टकारी, हानिकारक, विषयपूर्ति में बाधक लगी ठीक नहीं लगी उसे अनिष्ट अर्थात् बुरी लगना। उसका विलोमः इष्ट।

101. **प्रत्याख्यानावरणीय** = प्रत्याख्यान का विवेचन पूर्व में आया। ऐसे प्रत्याख्यान लेने का जीव का भाव नहीं आने देने को कर्म परिभाषा में प्रत्याख्यान-गुण पर आवरण, पर्दा, कहा।

102. **कृश** = कषायों-विषयों के भाव, निमित्त शरीरर को कमजोर, बलहीन, क्षीण, निर्जीण करना।

103. **जुगुप्सा** = महारोगी व्यक्ति मवाद-मलमूलत्र को देखकर घृण भाव आना।

104. **निस्तेज** = कर्म का तेज समाप्त करना, निर्जरित करना। कर्म-क्षीण करना, झाड़ देना।

105. **आभ्यांतर** = आत्मा के अन्दर के भाव।

106. **आतापना** = भयंकर गर्मी में, सूर्य की तेज गर्मी में बैठ-लेटकर दुख-कष्ट न होना। उष्ण आतापना, भयंकर से भयंकरतम ठिठुरन में छप्पर से हटकर, कपड़े से हटकर, शीत से दुखी न होना - शीत आतापना, कर्म निर्जरा की साधना है।

107. **उपसर्ग** = ऐसे स्थान पर या व्यक्ति, व्यक्तियों के बीच में जाकर ध्यानस्थ हो जाना, हिंसक पशुओं के बीच, जंगल में, अनार्य (अनाड़ी) व्यक्तियों के बीच जाकर, दुख या कष्ट जानबूझकर मोल लेना, उपसर्ग-कष्ट बुलाना और उससे अप्रभावित रहना, ध्यानलीन होना, विजय माना। कर्म-निर्जरा का विशिष्ट साधन है। उपसर्ग मोल लेना, आ जाए जो जरा भी दुखी न होना। कष्टों का अनुभव न करना, कष्टानुभूति के स्थान पर उन्हीं क्षणों आत्मानुभूति, कर्मों की धड़ाधड़ निर्जरा की विशिष्ट साधना है।

108. **परिष्कार** = शुद्धि, विशुद्धि, आत्मा की विशुद्धि करना।

109. **स्वरूपानन्द** = आत्मा के स्वयं के आनन्द में, स्व-स्वभाव में रमण, आनन्द मग्न होना।

110. **देहाध्यास** - देह (शरीर) ही मैं हूँ, शरीर रूप ही मैं हूँ, ऐसा सतत-निरन्तर भाव।

111. **आत्यान्तिक** = ऐसा वियोग शरीर, कर्म, कर्म फल का अन्त वियोग हो जाए, पुनः न जड़े।

112. **अवस्थित** = आत्मा का, प्रत्येक द्रव्य का त्रैकालिक गुण, जैसे होना चाहिए, वैसे ही रहना।

113. **कर्मांश** = कर्मों का अंश मात्र भी रह जाना, कर्मांश बचे हैं तो गति में जाना पड़ता है।

114. **घात या घाती कर्म** = जो आत्मा के स्वयं के त्रैकालिक गुण, मुख्यतः ज्ञान, दर्शन, सुख, वीर्य हैं, उनकी घात, हानि करना, हानि पहुंचना, स्वयं ही आत्मा करता है, उसी से चार घोर कर्म – ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय, अन्तरायकर्म घाती हैं।

115. **धर्मवेत्ता** = आत्मा के वास्तविक, त्रैकालिक गुण हैं, उन्हें जानने वाला धर्मवेत्ता होता है। ऐसे शुद्ध धर्म, वीतरागधर्म, आत्मधर्म का प्रतिपादन करने वाला धर्मवेत्ता होता है।

116. **बद्ध-स्पृष्ट** = आत्मा से कर्म का बंधना, छूना।

117. **अवगाहना** = आत्मा के असंख्यात प्रदेश, जब तक जीव संसार परिभ्रमण करता है, शरीर के प्रमाण (छोटा-बड़ा) से संकुचित-विस्तारित होते हैं, उसे अवगाहना कहा।